International Journal Of Multidisciplinary Research In Science,

Engineering And Technology (IJMRSET)

Volume 2, Issue 12, December 2019

वैदिक साहित्य में समाहित स्वदेशी की भावना

Dr. Saroj Meena

Associate Professor, Sanskrit Dept., BSR Govt. Arts College, Alwar, Rajasthan, India

सार

सामाजिक उत्कर्ष एवं समाज में सुख-समुन्नति हेतु जन-जन में राष्ट्रीय भावना होना आवश्यक है; क्योंकि राष्ट्रीय भावना से मनुष्य की आत्मीयता का दायरा बढ़ता है, जिससे उसकी संकीर्ण स्वार्थ-परायणता पर अंकुश लगता है। फलतः अपराध, अविश्वास, वैर, द्वेष सभी समाप्त हो जाते हैं और वह 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के स्तर तक अपनी मान्यताओं को विस्तृत कर लेता है। वैदिक काल में ऐसा ही था, इसीलिए उस समय सर्वत्र सुख-शांति-समृद्धि के दर्शन होते थे। वैदिक काल में प्रत्येक मानव राष्ट्रिय भावना से ओत-प्रोत था। उस समय मनुष्य भौतिक प्रगति के साथ आत्मिक प्रगति को भी पर्याप्त महत्व देते थे। वस्तुतः वे समष्टि चिन्तन से ओत-प्रोत थे, इसी कारण वे राष्ट्रवादी थे। इस राष्ट्र भावना का मूल स्रोत वेद हैं। वेदों में प्रयुक्त राष्ट्र शब्द संपूर्ण भूमण्डल का प्रतिनिधित्व करता है। वैदिक वाङ्मय में राष्ट्रीय भावना को जानने के लिए राष्ट्र शब्द की व्युत्पत्ति जानना आवश्यक है। दीप्त्यर्थक राज् धातु से शकार संयुक्त होकर 'ष्ट्रन' प्रत्यय जुड़कर निश्पन्न 'राष्ट्र' शब्द का अर्थ भूखण्ड, देश और जनपद होता है। उस देष की संस्कृति, सभ्यता, दर्शन, धर्म, तीर्थ, वन, पर्वत एवं नदियाँ आदि देश के अंतर्गत ही स्वीकार किये जाते हैं। यद्यपि देश शब्द राष्ट्र का बोध कराता है, किंतु देश और राष्ट्र के मूल अर्थ में कुछ वैभिन्य है। जहाँ गिरि, सागर, नदियों की भौतिक सीमा में आबद्ध भूखण्ड को देश कहते हैं, वहीं वह देश जब प्रशासनिक दृष्टि से भावना का द्योतक बनता है, उसमें सार्वभौमिकत्व, सार्वजनीनत्व एवं स्वातंत्र्य समाविश्ट हो जाता है, तब वही राष्ट्र कहा जाता है। चारों वेदों एवं अन्य वैदिक वाङ्मय में राश्ट्रिय भावना का पर्याप्त रूपेण दर्शन होता है। तत्कालीन मानव संपूर्ण पृथ्वी को अपनी माता तथा स्वयं को पृथ्वी का पुत्र मानता था, इसी विस्तृत चिन्तन के साथ व्यवहार करते हुए वह प्रत्येक प्राणी के साथ भाई-चारे की भावना से युक्त था। अतः उस समय सर्वत्र षान्ति विराजमान थी। आज के आपाधापी एवं संकीर्ण स्वार्थपरता के युग में वैदिक कालीन राष्ट्रीय भावना सर्वथा प्रासंगिक है। इसी भावना के अवधारण से मनुष्य सच्चे अर्था में मनुष्य बन सकता है, जिससे मानवोचित जीवन जीकर वह न केवल सृष्टि का मुकुट मणि बनकर सबका मार्गदर्षक बनेगा वरन् संपूर्ण धरा पर शांति की स्थापना में भी महत्त्वपूर्ण सिद्ध होगा।

परिचय

वैदिक साहित्य से तात्पर्य उस विपुल साहित्य से है जिसमें वेद, ब्राह्मण, अरण्यक एवं उपनिषद् शामिल हैं। वर्तमान समय में वैदिक साहित्य ही हिन्दू धर्म के प्राचीनतम स्वरूप पर प्रकाश डालने वाला तथा विश्व का प्राचीनतम् स्रोत है। वैदिक साहित्य को 'श्रुति' कहा जाता है, क्योंकि (सृष्टि/नियम)कर्ता ब्रह्मा ने विराटपुरुष भगवान् की वेदध्वनि को सुनकर ही प्राप्त किया है। अन्य ऋषियों ने भी इस साहित्य को श्रवण-परम्परा से ही ग्रहण किया था तथा आगे की पीढ़ियों में भी ये श्रवण परम्परा द्वारा ही स्थान्तरित किये गए। इस परम्परा को श्रुति परम्परा भी कहा जाता है तथा श्रुति परम्परा पर आधारित होने के कारण ही इसे श्रुति साहित्य भी कहा जाता है।[1,2]

वैदिक साहित्य के अन्तर्गत ऊपर लिखे सभी वेदों के कई उपनिषद, आरण्यक इनकी भाषा संस्कृत है जिसे अपनी अलग पहचान के अनुसार **वैदिक संस्कृत** कहा जाता है - इन संस्कृत शब्दों के प्रयोग और अर्थ कालान्तर में बदल गए या लुप्त हो गए माने जाते हैं। ऐतिहासिक रूप से प्राचीन भारत और हिन्दू-आर्य जाति के बारे में इनको एक अच्छा सन्दर्भ माना जाता है। संस्कृत भाषा के प्राचीन रूप को लेकर भी इनका साहित्यिक महत्त्व बना हुआ है।

रचना के अनुसार प्रत्येक शाखा की वैदिक शब्द-राशि के चार भाग हैं। वेद के मुख्य मन्त्र भाग को संहिता कहते हैं। संहिता के अलावा हरेक में टीका अथवा भाष्य के तीन स्तर होते हैं। कुल मिलाकर ये हैं :

- **संहिता** (मन्त्र भाग)
- **ब्राह्मण-ग्रन्थ** (गद्य में कर्मकाण्ड की विवेचना)
- **आरण्यक** (कर्मकाण्ड के पीछे के उद्देश्य की विवेचना)
- **उपनिषद** (परमेश्वर, परमात्मा-ब्रह्म और आत्मा के स्वभाव और सम्बन्ध का बहुत ही दार्शनिक और ज्ञानपूर्वक वर्णन)

जब हम चार 'वेदों' की बात करते हैं तो उससे संहिता भाग का ही अर्थ लिया जाता है। उपनिषद (ऋषियों की विवेचना), ब्राह्मण (अर्थ) आदि मंत्र भाग (संहिता) के सहायक ग्रंथ समझे जाते हैं। वेद ४ हैं - ऋक्, साम, यजुः और अथर्व। पूर्ण रूप में ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद व अथर्ववेद।

इस विषय के विद्वानों में पर्याप्त मतभेद है कि वेदों की रचना कब हुई और उनमें किस काल की सभ्यता का वर्णन मिलता है। भारतीय वेदों को अपौरुषेय (किसी पुरुष द्वारा न बनाया हुआ) मानते हैं अतः नित्य होने से उनके काल-निर्धारण का प्रश्न ही नहीं उठता; किन्तु पश्चिमी विद्वान इन्हें ऋषियों की रचना मानते हैं और इसके काल के सम्बन्ध में उन्होंने अनेक कल्पनाएँ की हैं। उनमें पहली कल्पना मैक्समूलर की है। उन्होंने वैदिक साहित्य का काल 1200 ई. पू. से 600 ई. पू. माना है। दूसरी कल्पना जर्मन विद्वान मारिज विण्टरनित्ज की है। उसने वैदिक साहित्य के आरम्भ होने का काल 2500-2000 ई. पू. तक माना। तिलक और अल याकुबी ने वैदिक साहित्य में वर्णित नक्षत्रों की स्थिति के आधार पर इस साहित्य का आरम्भ काल 4500 ई.पू. माना। श्री अविनाशचन्द्र दास तथा पावगी ने ऋग्वेद में वर्णित भूगर्भ-विषयक साक्षी द्वारा ऋग्वेद को कई लाख वर्ष पूर्व का ठहराया है।[3,4]

वैदिक साहित्य निम्न भागों में बँटा है-

(1) संहिता, (2) ब्राह्मण, (3) आरण्यक, (4) उपनिषद्
और (1) वेदांग (2) सूत्र-साहित्य

संहिता का अर्थ है संग्रह। संहिताओं में विभिन्न देवताओं के स्तुतिपरक मंत्रों का संकलन है। संहिताएँ चार हैं-(1) ऋक् (2) यजुष्, (3) साम और (4) अथर्व प्राचीन परम्परा के अनुसार वेद नित्य और अपौरुषेय हैं। उनकी कभी मनुष्य द्वारा रचना नहीं हुई। सृष्टि के प्रारम्भ में परमात्मा ने इनका प्रकाश अग्नि, वायु आदित्य और अंगिरा नामक ऋषियों को दिया। प्रत्येक वैदिक मन्त्र का देवता और ऋषि होता है। मन्त्र में जिसकी स्तुति की जाय वह उस मन्त्र का देवता है और जिसने मन्त्र के अर्थ का सर्वप्रथम प्रदर्शन किया हो वह उसका ऋषि है। पाश्चात्य विद्वान ऋषियों को ही वेद-मन्त्रों का रचयिता मानते हैं। वैदिक साहित्य को श्रुति भी कहा जाता है, क्योंकि पुराने ऋषियों ने इस साहित्य को श्रवण-परम्परा से ग्रहण किया था। बाद में इस ज्ञान को स्मरण करके जो ग्रन्थ लिखे गए, वे स्मृति कहलाए। श्रुति के शीर्ष स्थान पर उपर्युक्त चार संहिताएँ हैं। ऋग्वेद में 10,627 मन्त्र और 1,028 सूक्त हैं, ये दस मण्डलों में विभक्त हैं। सूक्तों में देवताओं की स्तुतियाँ हैं। ये बड़ी भव्य, उदात्त और काव्यमयी हैं। इनमें कल्पना की नवीनता, वर्णन की प्रौढ़ता और प्रतिभा की ऊँची उड़ान मिलती है। 'उषा' आदि कई देवताओं के वर्णन बड़े हृदयग्राही हैं।[5,6] पाश्चात्य विद्वान ऋग्वेद की संहिता को सबसे प्राचीन मानते हैं। उनका विचार है कि इसके अधिकांश सूक्तों की रचना पंजाब में हुई। उस समय आर्य अफगानिस्तान से गंगा-यमुना तक के प्रदेशों में फैले हुए थे। उनके मत में ऋग्वेद में कुभा (काबुल), सुवास्तु (स्वात), क्रमु (कुर्रम), गोमती (गोमल), सिन्धु, गंगा, यमुना सरस्वती तथा पंजाब की पाँच नदियों शतुद्रि (सतलुज), विपाशा (व्यास), परुष्णी (रावी), असिवनी (चनाब) और वितस्ता (झेलम) का उल्लेख है। इन नदियों से सिंचित प्रदेश भारत में आर्य-सभ्यता का जन्म-स्थान माना जाता है।

इसमें यज्ञ-विषयक मन्त्रों का संग्रह है। इनका प्रयोग यज्ञ के समय अध्वर्यु नामक पुरोहित किया करता था। यजुर्वेद में 40 अध्याय हैं। तथा 1975 मन्त्र निहित है। पाश्चात्य विद्वान इसे ऋग्वेद से काफी समय बाद का मानते हैं। ऋग्वेद में आर्यों का कार्य-क्षेत्र पंजाब है, इसमें कुरु-पांचाल। कुरु सतलुज यमुना का मध्यवर्ती भू-भाग (वर्तमान अम्बाला डिवीज़न) है और पांचाल गंगा-यमुना का दोआब था। इसी समय से गंगा-यमुना का प्रदेश आर्य-सभ्यता का केन्द्र हो गया। ऋग्वेद का धर्म उपासना-प्रधान था, किन्तु यजुर्वेद के दो भेद हैं-कृष्ण यजुष् और शुक्ल यजुष्। दोनों के स्वरूप में बड़ा अन्तर है, पहले में केवल मन्त्रों का संग्रह है और दूसरे में छन्दोबद्ध मन्त्रों के साथ गद्यात्मक भाग सभी है। इसमें गेय मन्त्रों का संग्रह है। यज्ञ के अवसर पर जिस देवता के लिए होम किया जाता था, उसे बुलाने के लिए उद्गाता उचित स्वर में उस देवता का स्तुति-मन्त्र गाता था। इस गायन को 'साम' कहते थे। प्रायः ऋचाएँ ही गाई जाती थीं। अतः समस्त सामवेद में ऋचाएँ ही हैं। इनकी संख्या 1,875 है। इनमें से केवल 75 ही नई हैं, बाकी सब ऋग्वेद से ली गई हैं। भारतीय संगीत का मूल सामवेद में उपलब्ध होता है। अथर्ववेद का यज्ञों से बहुत कम सम्बन्ध है। इसमें आयुर्वेद सम्बन्धी सामग्री अधिक है। इसका प्रतिपाद्य विषय विभिन्न प्रकार की ओषधियाँ, ज्वर, पीलिया, सर्पदंश, विष-प्रभाव को दूर करने के मन्त्र सूर्य की स्वास्थ्य-शक्ति, रोगोत्पादक कीटाणुओ के शमन अदि का वर्णन है , इस वेद में यज्ञ करने के लाभ को तथा यज्ञ से पर्यावरण की रक्षा का भी वर्णन है। वे इसमें आर्य और अनार्य धार्मिक विचारों का सम्मिश्रण देखते हैं, किन्तु वस्तुतः इसमें राजनीति तथा समाज-शास्त्र के अनेक ऊँचे सिद्धान्त हैं। इसमें 20 काण्ड, 34 प्रपाठक, 111 अनुवाक, 731 सूक्त तथा 5,977 मन्त्र हैं, इनमें 1200 के लगभग मन्त्र ऋग्वेद से लिए गए हैं। ऊपर कहे गए चारों संहिताएं पहले एक ही जगह थे। वेदव्यास जी ने यज्ञसिद्धिके लिए चार भागों में विभाजन किया था।[7,8]

प्राचीन भारत में सिंधु घाटी सभ्यता के पश्चात जिस नवीन सभ्यता का विकास हुआ उसे ही **आर्य सभ्यता** अथवा **वैदिक सभ्यता** के नाम से जाना जाता है। वैदिक सभ्यता ही हिन्दू सभ्यता है। इस काल की जानकारी हमे मुख्यत: वैदिक साहित्य से प्राप्त होती है, जिसमे ऋग्वेद सर्वप्राचीन होने के कारण सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। वैदिक काल को ऋग्वैदिक या पूर्व वैदिक काल (1500–1000 ई.पू.) तथा उत्तर वैदिक काल (1000–600 ई.पू.) में बांटा गया है। वैदिक काल या वैदिक युग (ल. 1500 से ल. 500 ईसा पूर्व),

शहरी सिंधु घाटी सभ्यता के अंत और उत्तरी मध्य-गंगा में शुरू होने वाले एक "दूसरे शहरीकरण" के बीच उत्तरी भारतीय उपमहाद्वीप के इतिहास में अवधि है।

वैदिक साहित्य जो इस अवधि के दौरान लिखे गए, समकालीन जीवन का विवरण देने वाले प्रख्यात ग्रंथ हैं और साथ ही विश्व के प्राचीनतम ग्रंथ भी है। जिन्हें ऐतिहासिक माना गया है और अवधि को समझने के लिए प्राथमिक स्रोतों का गठन किया गया है। संबंधित पुरातात्विक अभिलेखों के साथ ये दस्तावेज वैदिक संस्कृति के विकास का पता लगाने और उस काल का अनुमान लगाने की अनुमति देते हैं।

वेदों की रचना और मौखिक रूप से एक पुरानी हिन्द-आर्य भाषाएँ बोलने वालों द्वारा सटीक रूप से प्रेषित की गई थी, जो इस अवधि के शुरू में भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रों में चले गए थे। वैदिक समाज "पितृसत्तात्मक" था। आरंभिक वैदिक आर्य पंजाब में केंद्रित एक कांस्य युग के समाज से थे, जो कि राज्यों के बजाय जनजातियों में संगठित थे। इनका मुख्य रूप से जीवन देहाती था। ल. 1500–1300 ई.पू., वैदिक आर्य पूर्व में उपजाऊ पश्चिमी गंगा के मैदान में फैल गए और उन्होंने लोहे के उपकरण अपना लिए, जो जंगल को साफ करने और अधिक व्यवस्थित, कृषि जीवन के लिए उपयोगी थे।[9,10]

वैदिक काल के उत्तरार्ध में भारत राजवंश, यदुवंश और कुरु साम्राज्य मुख्य शक्ति के रूप में उबरे। वैदिक हिन्दू समाज यज्ञ परक था और यज्ञ सामाजिक व्यवस्था का एक अंग था। इस काल की वर्ण व्यवस्था "कार्यानुसार" थी ना की जन्मनुसार थी।

वैदिक काल के अंत में (ल. 700 से 500 ई.पू मे) महानगरो और बड़े राज्यों महाजनपद का उदय हुआ। इसके साथ-साथ श्रमण परम्परा (जैन धर्म और बौद्ध धर्म सहित) में वृद्धि हुई, जिसने वैदिक परंपराओं को चुनौती दी।

वैदिक संस्कृति के चरणों से पहचानी जाने वाली पुरातात्विक संस्कृतियों में चार मुख्य है–

1. चित्रित धूसर मृद्भाण्ड संस्कृति
2. काले और लाल बर्तन संस्कृति
3. गेरू की कब्र संस्कृति
4. चित्रित ग्रे वेयर संस्कृति में गेरू रंग की बर्तनों की संस्कृति[11,12]

वेदों के अतिरिक्त संस्कृत के संस्कृत साहित्य के अन्य कई ग्रंथो की रचना भी 9वी शताब्दी से 5वी शताब्दी ई.पू काल में हुई थी। वेदांगसूत्रों की रचना मन्त्र, ब्राह्मणग्रंथ और उपनिषद इन वैदिकग्रन्थों को व्यवस्थित करने मे हुआ है। रामायण, महाभारत और पुराणों की रचना हुआ जो इस काल के ज्ञानप्रदायी स्रोत माना गया हैं। अनन्तर चार्वाक, तान्त्रिकौं, बौद्ध और जैन धर्म का उदय भी हुआ।

इतिहासकारों का मानना है कि आर्य मुख्यतः उत्तरी भारत के मैदानी इलाकों में रहते थे इस कारण आर्य सभ्यता का केन्द्र मुख्यत उत्तरी भारत था। इस काल में उत्तरी भारत (आधुनिक पाकिस्तान, बांग्लादेश तथा नेपाल समेत) कई महाजनपदों में बंटा था।

विचार-विमर्श

प्राचीन काल में वेदों की रक्षा गुरु-शिष्य परम्परा द्वारा होती थी। इनका लिखित एवं निश्चित स्वरूप न होने से वेदों के स्वरूप में कुछ भेद आने लगा और इनकी शाखाओं का विकास हुआ। ऋग्वेद की पाँच शाखाएँ थीं - शैशिरीयशाकल, बाष्कल, आश्वलायन, शांखायन और माण्डूकेय। इनमें अब पहली शाखा ही उपलब्ध होती है। यह शाखा आदित्य सम्प्रदायिका है। शुक्ल यजुर्वेद की दो प्रधान शाखाएँ हैं - माध्यंदिन और काण्व। पहली उत्तरी भारत में मिलती है और दूसरी महाराष्ट्र में। इनमें अधिक भेद नहीं है। कृष्ण यजुर्वेद की आजकल चार शाखाएँ मिलती हैं - तैत्तिरीय मैत्रायणी, काठक (या कठ) तथा कापिष्ठल संहिता। इनमें दूसरी-तीसरी पहली से मिलती हैं, क्रम में थोड़ा ही अन्तर है। चौथी शाखा आधी ही मिली है। यह वेद ब्रह्मसम्प्रदायिका है। सामवेद की दो शाखाएँ थीं - कौथुम और राणायनीय। इसमें कौथुम का केवल सातवाँ प्रपाठक मिलता है। यह शाखा भी आदित्य सम्प्रदायका है। अथर्ववेद की दो शाखाएँ उपलब्ध हैं-पैप्पलाद और शौनक। वर्तमान समय में शौनक शाखा ही पूर्णरुप में प्राप्त होती है, यह शाखा आदित्यसम्प्रदायिका है। चारों वेदों के संस्कृत भाषा में प्राचीन समय में जो अनुवाद थे 'मन्त्रब्राह्मणयोः वेदनामधेयम्' के अनुसार वे ब्राह्मण ग्रंथ कहे जाते हैं। चार मुख्य ब्राह्मण ग्रंथ हैं- ऐतरेय, शतपथ, साम और गोपथ | वेद संहिताओं के बाद ब्राह्मण-ग्रन्थों का निर्माण हुआ माना जाता है। इनमें यज्ञों के कर्मकाण्ड का विस्तृत वर्णन है, साथ ही शब्दों की व्युत्पत्तियाँ तथा प्राचीन राजाओं और ऋषियों की कथाएँ तथा सृष्टि-सम्बन्धी विचार हैं। प्रत्येक वेद के अपने ब्राह्मण हैं। ऋग्वेद के दो ब्राह्मण हैं - (1) ऐतरेय ब्राह्मण और (2) कौषीतकी। ऐतरेय में 40 अध्याय और आठ पंचिकाएँ हैं, इसमें अग्निष्टोम, गवामयन, द्वादशाह आदि सोमयागों, अग्निहोत्र तथा राज्याभिषेक का विस्तृत ऐतरेय ब्राह्मण-जैसा ही है। इनसे तत्कालीन इतिहास पर काफी प्रकाश पड़ता है। ऐतरेय में शुनःशेप की प्रसिद्ध कथा है। कौषीतकी से प्रतीत होता है कि उत्तर भारत में भाषा के सम्यक् अध्ययन पर बहुत बल दिया जाता था।

शुक्ल यजुर्वेद का ब्राह्मण शतपथ के नाम से प्रसिद्ध है, क्योंकि इसमें सौ अध्याय हैं। ऋग्वेद के बाद प्राचीन इतिहास की सबसे अधिक जानकारी इसी से मिलती है। इसमें यज्ञों के विस्तृत वर्णन के साथ अनेक प्राचीन आख्यानों, व्युत्पत्तियों तथा सामाजिक बातों का वर्णन है। इसके समय में कुरु-पांचाल आर्य संस्कृति का केन्द्र था, इसमें पुरूरवा और उर्वशी की प्रणय-गाथा, च्यवन ऋषि तथा महा प्रलय का आख्यान, जनमेजय, शकुन्तला और भरत का उल्लेख है। सामवेद के अनेक ब्राह्मणों में से पंचविंश या ताण्ड्य ही महत्त्वपूर्ण है। अथर्ववेद का ब्राह्मण गोपथ के नाम से प्रसिद्ध है।

ब्राह्मणों के अन्त में कुछ ऐसे अध्याय मिलते हैं जो गाँवों या नगरों में नहीं पढ़े जाते थे। इनका अध्ययन-अध्यापन गाँवों से दूर (अरण्यों/वनों) में होता था, अतः इन्हें आरण्यक कहते हैं। गृहस्थाश्रम में यज्ञविधि का निर्देश करने के लिए ब्राह्मण-ग्रन्थ उपयोगी थे और उसके बाद वानप्रस्थ आश्रम में संन्यासी आर्य यज्ञ के रहस्यों और दार्शनिक तत्त्वों का विवेचन करने वाले आरण्यकों का अध्ययन करते थे। उपनिषदों का इन्हीं आरण्यकों से विकास हुआ। आरण्यको का मुख्य विषय आध्यात्मिक तथा दार्शनिक चिंतन है।[13]

वैदिक सभ्यता का नाम ऐसा इस लिए पड़ा कि वेद उस काल की जानकारी का प्रमुख स्रोत हैं। वेद चार है - ऋग्वेद, सामवेद, अथर्ववेद और यजुर्वेद। इनमें से ऋग्वेद की रचना सबसे पहले हुई थी। ऋग्वेद में ही गायत्री मन्त्र है जो सावित्री (सूर्य देव) को समर्पित है।

ऋग्वेद के काल निर्धारण में विद्वान एकमत नहीं है। सबसे पहले मैक्स मूलर ने वेदों के काल निर्धारण का प्रयास किया। उसने बौद्ध धर्म (550 ईसा पूर्व) [3]से पीछे की ओर चलते हुए वैदिक साहित्य के तीन ग्रंथों की रचना को मनमाने ढंग से 200-200 वर्षों का समय दिया और इस तरह ऋग्वेद के रचना काल को 1200 ईसा पूर्व के करीब मान लिया पर निश्चित रूप से उसके आंकलन का कोई आधार नहीं था।

वैदिक काल को मुख्यतः दो भागों में बांटा जा सकता है- ऋग्वैदिक काल और उत्तर वैदिक काल। ऋग्वैदिक काल आर्यों के आगमन के तुरंत बाद का काल था जिसमें कर्मकांड गौण थे पर उत्तरवैदिक काल में हिन्दू धर्म में कर्मकांडों की प्रमुखता बढ़ गई।

सूत्र साहित्य वैदिक साहित्य का अंग है तथा यह उसे समझने में सहायक भी है।[14]

ब्रह्म सूत्र-श्री वेद व्यास ने वेदांत पर यह परमगूढ़ ग्रंथ लिखा है जिसमें परमसत्ता, परमात्मा, परमसत्य, ब्रह्मस्वरूप ईश्वर तथा उनके द्वारा सृष्टि और ब्रह्मतत्त्व वर गूढ़ विवेचना की गई है। इसका भाष्य श्रीमद् आदिशंकराचार्य जी ने भगवान व्यास जी के कहने पर लिखा था।

कल्प सूत्र- ऐतिहासिक दृष्टि से सर्वाधिक महत्वपूर्ण। वेदों का हस्त स्थानीय वेदांग।

श्रोत सूत्र- महायज्ञ से सम्बंधित विस्तृत विधि-विधानों की व्याख्या। वेदांग कल्पसूत्र का पहला भाग।

स्मार्तसूत्र - षोडश संस्कारों का विधान करने वाला कल्प का दूसरा भाग।

शुल्बसूत्र- यज्ञ स्थल तथा अग्निवेदी के निर्माण तथा माप से सम्बंधित नियम इसमें हैं। इसमें भारतीय ज्यामिति का प्रारम्भिक रूप दिखाई देता है। कल्प का तीसरा भाग।

धर्म सूत्र- इसमें सामाजिक धार्मिक कानून तथा आचार संहिता है। कल्प का चौथा भाग

गृह्य सूत्र- परुवारिक संस्कारों, उत्सवों तथा वैयक्तिक यज्ञों से सम्बंधित विधि-विधानों की चर्चा है।

परिणाम

उपनिषदों में मानव-जीवन और विश्व के गूढ़तम प्रश्नों को सुलझाने का प्रयत्न किया गया है। ये भारतीय अध्यात्म-शास्त्र के देदीप्यमान रत्न हैं। इनका मुख्य विषय ब्रह्म-विद्या का प्रतिपादन है। वैदिक साहित्य में इनका स्थान सबसे अन्त में होने से ये 'वेदान्त' भी कहलाते हैं। इनमें जीव और ब्रह्म की एकता के प्रतिपादन द्वारा ऊँची-से-ऊँची दार्शनिक उड़ाने ली गई है। भारतीय ऋषियों ने गम्भीरतम चिन्तन से जिन आध्यात्मिक तत्त्वों का साक्षात्कार किया, उपनिषद उनका अमूल्य कोष हैं। इनमें अनेक शतकों की तत्त्व-चिन्ता का परिणाम है। मुक्तिकोपनिषद् चारों वेदों से सम्बद्ध 108 उपनिषद् गिनाये गए हैं, किन्तु 11 उपनिषद् ही अधिक प्रसिद्ध हैं-ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, तैत्तिरीय, ऐतरेय, छान्दोग्य, बृहदारण्यक और श्वेताश्वतर इनमें छान्दोग्य और बृहदारण्यक अधिक प्राचीन और महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं। वैदिक साहित्यका यह सिद्धान्त देखा जाता है प्रत्येक मन्त्रभागमे एक और ब्राह्मणभागमे एक उपनिषद उपदिष्ट थे। अब प्राय लुप्त होगए| अब भी यह सिद्धान्त शुक्ल यजुर्वेदमे बचा है- ईशावास्योनिषद् मन्त्रोपनिषद् है और बृहदारण्यकोपनिषद् ब्राह्मणोपनिषद् है। वैदिक साहित्य के विशाल एवं जटिल होने पर कर्मकाण्ड से सम्बद्ध सिद्धान्तों को एक नवीन रूप दिया गया। कम-से-कम शब्दों में अधिक-से-अधिक अर्थ-प्रतिपादन करने वाले छोटे-छोटे वाक्यों में सब महत्त्वपूर्ण विधि-

विधान प्रकट किये जाने लगे। इन सारगर्भित वाक्यों को सूत्र कहा जाता था। कर्मकाण्ड-सम्बन्धी सूत्र-साहित्य को चार भागों में बाँटा गया-

(1) श्रौत सूत्र (2) गृह्य सूत्र (3) धर्म सूत्र और (4) शुल्ब सूत्र

पहले में वैदिक यज्ञ सम्बन्धी कर्मकाण्ड का वर्णन है। दूसरे में गृहस्थ के दैनिक यज्ञों का, तीसरे में सामाजिक नियमों का और चौथे में यज्ञ-वेदियों के निर्माण का।

श्रौत का अर्थ है श्रुति (वेद) से सम्बद्ध यज्ञ याग। अतः श्रौत सूत्रों में तीन प्रकार की अग्नियों के आधान अग्निहोत्र, दर्श पौर्णमास, चातुर्मास्यादि साधारण यज्ञों तथा अग्निष्टोम आदि सोमयागों का वर्णन है। ये भारत की प्राचीन यज्ञ-पद्धति पर बहुत प्रकाश डालते हैं। ऋग्वेद के दो श्रौत सूत्र हैं-शांखायन और आश्वलायन। शुक्ल यजुर्वेद का एक-कात्यायन, कृष्ण यजुर्वेद के छः सूत्र हैं-आपस्तम्ब, हिरण्यकेशी, बौधायन, भारद्वाज, मानव, वैखानस। सामवेद के लाट्यायन, द्राह्यायण और आर्षेय नामक तीन सूत्र हैं। अथर्ववेद का एक ही वैतान सूत्र है। इनमें उन विचारों तथा जन्म से मरणपर्यन्त किये जाने वाले संस्कारों का वर्णन है, जिनका अनुष्ठान प्रत्येक हिन्दू-गृहस्थ के लिए आवश्यक समझा जाता था।[15] उपनयन और विवाह-संस्कार का विस्तार से वर्णन है। इन ग्रन्थों के अध्ययन से प्राचीन भारतीय समाज के घरेलू आचार-विचार का तथा विभिन्न प्रान्तों के रीति-रिवाज का परिचय पूर्ण रूप से हो जाता है। ऋग्वेद के गृह्य सूत्र शांखायन और आश्वलायन हैं। शुक्ल यजुर्वेद का पारस्कर, कृष्ण यजुर्वेद के आपस्तम्ब, हिरण्यकेशी, बौधायन, Bharadvaj , वराह,मानव, काठक और वैखानस, सामवेद के गोभिल तथा खादिर और अथर्ववेद का कौशिक। इनमें गोभिलको प्राचीनतम माना जाता है। धर्मसूत्रों में सामाजिक जीवन के नियमों का विस्तार से प्रतिपादन है। वर्णाश्रम-धर्म की विवेचना करते हुए ब्रह्मचारी, गृहस्थ व राजा के कर्त्तव्यों, विवाह के भेदों, दाय की व्यवस्था, निषिद्ध भोजन, शुद्धि, प्रायश्चित्त आदि का विशेष वर्णन है। इन्हीं धर्मसूत्रों से आगे चलकर स्मृतियों की उत्पत्ति हुई, जिनकी व्यवस्थाएँ हिन्दू-समाज में आज तक माननीय समझी जाती हैं। वेद से सम्बद्ध केवल तीन धर्मसूत्र ही अब तक उपलब्ध हो सके हैं-आपस्तम्ब, हिरण्यकेशी व बौधायन। ये कृष्णयजुर्वेद की तैत्तिरीय शाखा से सम्बद्ध हैं। शुक्लयजुर्वेदका शंखलिखित धर्मसूत्र होनेकी बात सुना है। अन्य धर्मसूत्रों में सामवेदसे सम्बद्ध गौतमधर्मसूत्र और ऋग्वेदसे सम्बद्ध वसिष्ठधर्मसूत्र उल्लेखनीय हैं। इनका सम्बन्ध श्रौतसूत्रों से है। शुल्ब का अर्थ है मापने का डोरा। अपने नाम के अनुसार शुल्ब सूत्रों में यज्ञ-वेदियों को नापना, उनके लिए स्थान का चुनना तथा उनके निर्माण आदि विषयों का विस्तृत वर्णन है। ये भारतीय ज्यामिति के प्राचीनतम स्रोतग्रन्थ हैं।

- आर्य एक ईश्वर पर विश्वास करते थे।
- यहाँ प्राकृतिक मानव के हित के लिये ईश्वर से कामना की जाती थी। वे मुख्य रूप से केवल ब्रह्माण्ड को धारण करने वाले एकमात्र परमपिता परमेश्वर के पूजक थे। वैदिक धर्म पुरूष प्रधान धर्म था। स्वर्ग या अमरत्व कीपरिकल्पना नहीं थी।

- वैदिक धर्म पुरोहितों व यज्ञ से नियंत्रित धर्म था। पुरोहित ईश्वर एवं मानव के बीच मध्यस्थ था। मनुष्य एवं देवता के बीच मध्यस्थ की भूमिका निभाने वाले देवता के रूप में अग्नि की पूजा की जाती थी। वैदिक देवताओं का स्वरुप महिमामंडित मानवों का है। ऋग्वेद में 33 प्रकार के तत्वों (दिव्य गुणों से युक्त पदार्थो) का उल्लेख है।

निष्कर्ष

काफी समय बीतने के बाद वैदिक साहित्य जटिल एवं कठिन प्रतीत होने लगा। उस समय वेद के अर्थ तथा विषयों का स्पष्टीकरण करने के लिए अनेक सूत्र-ग्रन्थ लिखे जाने लगे। इसलिए इन्हें वेदाङ्ग कहा गया।

वेदाङ्ग छः हैं-

शिक्षा, छन्द, व्याकरण, निरुक्त, कल्प और ज्योतिष

पहले चार वेदांग, मन्त्रों के शुद्ध उच्चारण और अर्थ समझने के लिए तथा अन्तिम दो वेदांग धार्मिक कर्मकाण्ड और यज्ञों का समय जानने के लिए आवश्यक हैं। व्याकरण को वेद का मुख कहा जाता है, ज्योतिष को नेत्र, निरुक्त को श्रोत्र, कल्प को हाथ, शिक्षा को नासिका तथा छन्द को दोनों पैर। उन ग्रन्थों को शिक्षा कहते हैं, जिनकी सहायता से वेद-मन्त्रों के उच्चारण का शुद्ध ज्ञान होता था। वेद-पाठ में स्वरों का विशेष महत्त्व था। इनकी शिक्षा के लिए पृथक् वेदांग बनाया गया। इसमें वर्णों के उच्चारण के अनेक नियम दिये गए हैं। संसार में उच्चारण-शास्त्र की वैज्ञानिक विवेचना करने वाले पहले ग्रन्थ यही हैं। ये वेदों की विभिन्न शाखाओं से सम्बन्ध रखते हैं और प्रातिशाख्य कहलाते हैं। ऋग्वेद अथर्ववेद, वाजसेनीय व तैत्तिरीय संहिता के प्रातिशाख्य मिलते हैं। बाद में इसके आधार पर शिक्षा-ग्रन्थ लिखे गए। इनमें शुक्ल यजुर्वेद की याज्ञवल्क्य-शिक्षा, सामवेद की नारद शिक्षा और पाणिनि की पाणिनीय शिक्षा मुख्य हैं. वैदिक मन्त्र छन्दोवद्ध हैं। छन्दों का बिना ठीक ज्ञान प्राप्त किये, वेद- मन्त्रों का शुद्ध उच्चारण नहीं हो सकता। अतः छन्दों की विस्तृत विवेचना आवश्यक समझी गई। शौनक मुनि के ऋक्प्रातिशाख्य में, शांखायन श्रौतसूत्र में तथा सामवेद से सम्बद्ध

निदान सूत्र में इस शास्त्र का व्यवस्थित वर्णन है। किन्तु इस वेदांग का एकमात्र स्वतन्त्र ग्रन्थ पिंगलाचार्य-प्रणीत छन्द सूत्र है। इसमें वैदिक और लौकिक दोनों प्रकार के छन्दों का. इस अंग का उद्देश्य सन्धि, शब्द-रूप, धातु-रूप तथा इनकी निर्माण-पद्धति का ज्ञान कराना था। इस समय व्याकरण का सबसे प्रसिद्ध ग्रन्थ पाणिनी का अष्टाध्यायी है; किन्तु व्याकरण का विचार ब्राह्मण-ग्रन्थों के समय से शुरू हो गया था। पाणिनी से पहले गार्ग्य, स्फोटायन, भारद्वाज आदि व्याकरण के अनेक महान आचार्य हो चुके थे। इन सबके ग्रन्थ अब लुप्त हो चुके हैं। इसमें वैदिक शब्दों की व्युत्पत्ति दिखाई जाती थी। प्राचीन काल में वेद के कठिन शब्दों की क्रमबद्ध तालिका और कोश निघंटु कहलाते थे और इनकी व्याख्या निरुक्त में होती थी। आजकल केवल यास्काचार्य का निरुक्त ही उपलब्ध होता है। इसका समय 800 ई. पू. के लगभग है। वैदिक युग में यह धारणा थी कि वेदों का उद्देश्य यज्ञों का प्रतिपादन है। यज्ञ उचित काल और मुहूर्त में किये जाने से ही फलदायक होते हैं। अतः काल-ज्ञान के लिए ज्योतिष का ज्ञान अत्यावश्यक माना गया। इस प्रकार ज्योतिष के ज्ञाता को यज्ञवेत्ता जाना गया। इस प्रकार ज्योतिष शास्त्रका विकास हुआ। यह वेद का अंग समझा जाने लगा। इसका प्राचीनतम ग्रन्थ लगधमुनि-रचित वेदांग ज्योतिष पंचसंवत्सरमयं इत्यादि ४४ श्लोकात्मक है। नेपाल में इस ग्रन्थ के आधार पर बना वैदिक तिथिपत्रम् व्यवहार में लाया गया है। कल्प, वेद के छह अंगों (वेदांगों) में से वह अंग है जो कर्मकाण्डों का विवरण देता है। अनेक वैदिक ऐतिहासिकों के मत से कल्पग्रंथ या कल्पसूत्र छः वेदांगों में प्राचीनतम और वैदिक साहित्य के अधिक निकट हैं। वेदांगों में कल्प का विशिष्ट महत्त्व है क्योंकि जन्म, उपनयन, विवाह, अंत्येष्टि और यज्ञ जैसे विषय इसमें विहित हैं।[16]

संदर्भ

1. "संग्रहीत प्रति". वाईवेस पॅनोरामा. ०७ अक्तूबर २०१५. मूल से 6 जुलाई 2017 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि २५-०६-२०१७. |access-date=, |date= में तिथि प्राचल का मान जाँचें (मदद)
2. ↑ "पाठ-1 वेद का परिचय एवं महत्त्व". स्कूल ऑफ़ ओपन लर्निंग. दिल्ली विश्वविद्यालय. अभिगमन तिथि २५-०६-२०१७. |accessdate= में तिथि प्राचल का मान जाँचें (मदद)[
3. ↑ "पाठ-4 वेदांग-साहित्य". स्कूल ऑफ़ ओपन लर्निंग. दिल्ली विश्वविद्यालय. मूल से 15 मई 2018 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि २५ जून, २०१७. |accessdate= में तिथि प्राचल का मान जाँचें (मदद)
4. "कल्प विग्रह।". मूल से 20 अप्रैल 2019 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 14 मार्च 2019.
5. ↑ Witzel 1989.
6. ↑ "संग्रहीत प्रति". मूल से 22 जुलाई 2015 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 2 मई 2017.
7. ↑ "संग्रहीत प्रति". मूल से 19 सितंबर 2015 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 2 मई 2017.
8. ↑ ऋग्वैदिक आर्यों का जीवन।
9. गीता २.५३ - श्रुति विप्रतिपन्ना ते यदा स्थास्यति निश्चला। समाधावचला बुद्धिस्तदा योगमवाप्यसि॥ - यानि (हे अर्जुन) यदि तुम्हारा मन श्रुति में घुसकर भी शांत रहे, समाधि में बुद्धि अविचल रहे तभी तुम्हें सच्चा दिव्य योग मिला है।
10. ↑ आर्यों का आदिदेश
11. ↑ शतपथ ब्राह्मण के अनुसार - 'अग्नेर्वाऋग्वेदो जायते वायोर्यजुर्वेदः सूर्यात् सामवेदः, यानि अग्नि ऋषि से ऋक्, वायु ऋषि से यजुस् और सूर्य ऋषि से सामवेद का ज्ञान मिला। अंगिरस ऋषि को अथर्ववेद का ज्ञान मिला। इससे ब्रह्मा जैसे ऋषियोंने चारो वेदोंकी शिक्षाको स्वयं साक्षात्कार कर अन्य विद्वानों में फैलाया। श्रुतिपरंपरा में वेदग्रहणकालमें ब्रह्मा के चतुर्मुख होने का वर्णन आया है
12. ↑ वैशेषिक दर्शन, प्रथम अध्याय, प्रथम माह्नक, तृतीयश्लोक
13. ↑ ऋंगवेद संहिता प्रथम भाग में ख्याति प्राप्त प्रोफेसर मैक्स मूलर लिखते हैं (प्राक्कथन, पृष्ठ १०) कि वे इस बात से आश्वस्त हैं कि ये दुनिया की प्राचीनतम ग्रन्थ (पुस्तक) हैं।
14. ↑ पुस्तक मानवेर आदि जन्मभूमि लेखक श्रीविद्यारत्न जी, पृष्ठ १२४
15. ↑ "Sound and meaning of Veda".
16. ↑ दयानन्द सरस्वती. सत्यार्थ प्रकाश. पृ° 24-25.